ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 161-164

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

रीतिबद्ध, रीतिसिद्ध, रीतिमुक्त काव्य धाराएं

आभा श्रीवास्तव

असि0 प्रोफेसर– हिन्दी विभाग, श्री सुदृष्टि बाबा पी0 जी0 कालेज, रानीगंज– बलिया, (उ0प्र0), भारत

Received- 08.05.2020, Revised- 12.05.2020, Accepted - 18.05.2020 E-mail: ak4197004@gmail.com

सारांश : *श्रृंगार काल में रीतिबद्ध, रीतिसिद्ध और रीतिमुक्त दोनों पकार के रचनाओं के प्रणेता हुए और अपने–अपने क्षेत्रों में ख्याति अर्जित की। जिन रचयिताओं ने काव्यांगों के अनुसार परंपरायुक्त नियमों का पालन कर काव्य की रचना की उनहें लक्षण ग्रंथकार कवि रीतिकालीन कवि कहा गया है। जिसमें देव, पद्मकार, भूषण, मतिराम प्रमुख हैं। दूसरे प्रकार के कवि स्वछंद कहलाये क्योंकि उन्होंने उन रीति रिवाजों को जो कि रीति, रस, अलंकार, वक्रोक्ति आदि का ध्यान नहीं दिया क्योंकि ये अनुभूत प्रेरित थे। जबकि रीतिकालीन कवि लीक पर चलने वाले थे। भूषण ने तो यहॉ तक कहा है– भूषण बिनु न विराजई कविता बनिता मिल।*

पर इसको करारा जबाब देते हुए ठीक विपरीत में धनानंद की यह युक्ति उन्हें स्वयं बनाती है–"लोग है लागि कक्ति बनावत मोहि तो मोरे कवित बनावे"

कुंजीभूत शब्द– रीतिमुक्त,रचनाओं, ख्याति, अर्जित, लक्षण, ग्रंथकार, रीतिकालीन, परंपरायुक्त,गद्मकार, भूषण।

दोनों के बीच की कड़ी रीतिसिद्ध कहलाइ। अर्थात न पूर्ण रूप से काव्यांगो का रहा और न ही पूर्ण से रीतिमुक्त हुआ। बल्कि बीच की कडी से ही अपने को जकड़ कर रखा और दोनो तरफ का आंनद देखा। ऐसे कवियों को विद्वानों ने रीतिसिद्ध की परिधि मे रखा है। रीतिसिद्ध धारा के कवि बिहारी हैं। अतः यह सिद्ध हो गया है कि रीतिकाल के अन्तर्गत तीन तरह के काव्यों का प्रणयन हुआ– रीतिबद्ध– रीति की सारी सामग्री रीतिग्रंथकारों की काव्य की सामग्री थी शास्त्र की सामग्री नहीं। श्रृंगारिक रचना रीतिबद्ध थी। लक्षणकार लक्षण से तिल भर भी हट नहीं सकता। यदि वह रतिभर हटा तो लक्षण बेमेल हो जाता है। ग्रंथों में ऐसी रचनाएं कभी–कभी मिल ही जाती है। इसका कारण यही होता है कि कवि की वह लक्षणानुगामिनी नामित न होकर पहले से स्वीकृत उक्ति होती है, जिसे वह बरबस नहीं खोंसना चाहता है। रीति से केवल प्रेरणा लेने वाले कवि की कविता में ऐसा नहीं होता होगा, रीति उसके ध्यान में रहे, रहा करे पर उक्ति बांधने में उसे एकदम बंध ही न जाना पड़ेगा। रीतिबद्ध कवि जरा भी लीक से इधर उधर नहीं हटते उसी में गलते–पचते रहते उसका एक कारण यह भी था कि रीतिकालीन कवि दरवारी कर्ता थे। और अपने आश्रयदाताओं को खुश करने के लिए काव्य रचते। अतः निःसंकोच कहा जा सकता है कि रीतिबद्ध रचना में हृदय पक्ष दब सा गया था कला पक्ष उभर आया था। मस्तिष्क के पूरे त्याग के साथ उनका रीतिबद्ध काव्य अखाड़े में उतर आया था। जंग के कवि बहिरंग में ही रहे अतरंग में प्रवेश न पा सके। मध्ययुगीन रचनाऐं समय के अनुकूल परिस्थितिवश और अपने साहित्य के भावनों के विचार से भी उचित थी। उनका पुस्तक काव्य प्रधान होना अनिवार्य था। उन्होंने जो अनेक प्रकार की उद्भवनाऐं की उसके लिए वे समय के कारण मजबूर थे। जान बुझकर काव्य का स्वरूप उन्होंने विकृत नहीं किया है। रही घोर श्रृंगारिकता की बात तो विपरित रति और गुप्तांग के वर्णन संस्कृत और प्राकृत की परम्परा में पहले से ही होती चली आ रही है। फिर भी ऐसे वर्णनों के नाम पर जितनी अधिक कुत्सा की जाती है उतने अधिक परिणाम मे वे मिलते नहीं। वास्तविकता तो यह है कि रीतिबद्ध काव्य दरबारी वृति पाने एवं अपने आश्रयदाताओं के मनोरंजन के लिए ही घोर से घोर श्रृंगारिक रचनाऐं भी की पर यह नहीं कहा जा सकता कि वित्त के लिए सचमुच बिक गये थे। जबकि यह सच्चाई जग प्रसिद्ध है कि बिहारी अपनी रचना के ताकत से ही जयपुर नरेश को घोर श्रृंगार के भंवर से बाहर निकाला था।

अतः जिन कवियों ने युग के अनुरूप काव्य का निर्माण किया इसमें कृष्ण–बिहारी, चिन्तामणि, देव केशव और पद्माकर आदि प्रमुख है। चिन्तामणि चार भाई थे। चिन्तामणि, भूषण मतिराम और जयशंकर जिसमें चिन्तामंणि से रीतिकाल का आरम्भ माना जाता है। रीतिबद्ध उनकी रचनाओं में प्रमुख विशेषता है। काव्य विवेक, छंद विचार, . कवि कल्पद्रव्म प्रकाश उत्कृष्ठ रचना है। भूषण की रचनाओं में बीर रस का ग्रंथ शिवराज–भूषण मुख्य है। मतिराम की गणना रीतिकालीन कवियों की चोरी के रूप में की जाती है। आचार्य शुक्ल जी ने इनके विषय में कहा है – भावा

अनुरूपी लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

भिव्यंजक व्यापारों की श्रृंखला सीधी और सरल है बिहारी के समान चमकदार नहीं वचन वक्रता भी इन्हें बहुत पसंद न थी।[1] रीतिकाल के कवियो के व्यक्तित्व को प्रायः साहित्यक अभिरूचि पैतृक परम्परा के रूप मे प्राप्त थी। काव्य की परिशीलन एवं सृजन इनका नकल हीं थी स्थायी कत्तर्व्य कर्म था। ये लोग निम्न वर्ग के ही थे। तथापि अपनी काव्यकला के द्वारा ऐसे राजाओं अथवा रइसों का आश्रय खोज लेते थे जिनकी कृपा एवं सहायता से इनका काव्य साधना निर्विघ्न चलती रहे। अतएव इनका सम्पूर्ण गौरव इनकी काव्य कला पर ही निर्भर रहता था। इसी कारण कविता इनके लिए मूलतः एक ललित कला थी जिसके बल पर ये अपनी प्रतिभा एवं कला के प्रदर्शन के प्रति जागरूक थे। इनका निषेध तो नहीं किया जा सकता किन्तु इसके आगे बढ़कर काव्य व्यवसायिक्ता या फरमाईशी कवि कहना अन्याय होगा। सारांश यह है कि रीति काव्य में कला कांपती हुई आवाज अपको नहीं मिली कविता नहीं है। वह अपने प्रतिनिधि रूप व्यक्तिक गीत–कविता नहीं है, वह कलात्मक कविता है, स्वभावतः इसमें वस्तुत्व असन्दिगध है। इसलिए इसकी मूल प्रेरणा सीधे आत्मा भव्यजना की प्रवृत्ति मे न खोजकर आत्मदर्शन की प्रवृत्ति में खोजनी चाहिए।[2]

केशव काव्य में अलंकारों का स्थान समझने वाले चमत्कारी कवि थे। उनके इस मनोवृत्ति के कारण हिन्दी साहित्य इतिहास में एक विचित्र संयोग घटित हुआ। संस्कृत साहित्य शास्त्र के विकास कम भी एक संक्षिप्त उदाहरण हो गई। संस्कृत की ममाांसा क्रमशः बढ़ते बढ़ते जिस स्थिति पर पहुंच गई थी उस स्थिति से सामग्री न लेकर केशव ने उससे पूर्व से सामग्री ली। उन्होंने हिन्दी पाठकों का काव्य निरूपण किया। उस पूर्व दशा से परिचय कराया जो भामह उद्भट के समय में थी उस उत्तर दशा का नहीं जो आनन्दवर्धन, भममट और विश्वनाथ द्वारा विकसित हुई। भामह और उद्भट के समय मे अलंकार और अलंकार्य का भेद स्पष्ट नहीं हुआ था। रस, रीति, अलंकार आदि सबके लिए अलंकार शब्द का व्यवहार होता था। यही बात हम केशव की कविप्रिया मे भी पाते है। उसमे अलंकार के सामान्य और विशेष दो भेद करके सामान्य के अन्तर्गत वर्ण्य–विषय और विशेष के अन्तर्गत वास्तविक अलंकार मुक्तक गये है। रीतिग्रंथों के कर्ता भावुक सहृदय और निपूर्ण कवि थे। उनका उद्देश्य कविता करना था न कि व्यग्यों का शास्त्रीय पद्धति पर निरूपण मानना। अतः उनके द्वारा बड़ा भारी कार्य भारी कार्य यह हुआ कि रसों मे विशेषतः श्रृंगार (रस) और अलंकारो के बहुत ही रस और हृदयग्राही उदाहरण अत्यन्त प्रचुर प्रमाण मे प्रस्तुत हुए। ऐसे और मनमोहक उदाहरण संसकृत के सारे लक्षण ग्रंथ से चुनकर इकट्ठे करे तो भी उनकी इतनी अधिक संख्या न होगी। अलंकारों की अपेक्षा नायिकाओं की ओर कुछ अधिक झुकाव रहा। इससे श्रृंगार रस के अन्तर्गत बहुत सुंदर मुक्तक रचना हिन्दी मे हुई। और एक एक अंग को लेकर सरस ग्रंथ लिया गया। इस रस के भीतर दिखाया कि रस ग्रंथ वास्तव मे नायिका के ही ग्रंथ है। जिनमे दूसरे रस पीछे से चलते हुए दिखाये गये है। नायिका और श्रृंगार रस का आलिंगन है।

बिहारी रीति ग्रंथ लिखने वाले शास्त्रीय सामग्री की योजना मे सावधान रहते थे। उन्हें लक्ष्य और लक्षण का समन्वय भी करना पड़ता था। पर सतसई, नौसई, हजारा लिखने वाले रीति की सामग्री का उपयोग अपने ढ़ंग से करते थे। यही कारण है कि इन्हें कहने के लिए कुछ स्वच्छता मिल गई थी। इसलिए सतसई आदि प्रस्तुत करने वालो की रचना रीतिग्रंथ लिखने वालो से प्रायः उत्कृष्ठ दिखाय देती है। बंधन ढीला करके या कविता मे रमणीयता लाने मे आवश्यक अवश्य सिद्धि हासिल की।

रीतिबद्ध कृति उन्हीं की नहीं थी। जो लक्षण लिखकर लक्ष्य बनाकर उसमे विनियोजित करते थे। प्रत्युत्त उनकी कृति भी रीतिबद्ध ही थी जो लक्षणमय न रहकर रीति का संभार केवल लक्ष्य प्रस्तुत करते थे जैसे बिहारी, रसनीधि आदि इन्होंने लक्षण क्यों नहीं लिखा , लक्ष्य ही क्यों प्रस्तुत किये। ये वस्तुतः लक्षण के बखेड़े में फंसना नहीं चाहते, कुछ चुने हुए प्रसंग पर ही कविता रचना चाहते थे। ये रीति का बंधन ढीला करके चलते थे। तथापि ये उससे मुक्त नहीं हुए थे, इसी से लक्षणबद्ध रचना से इनकी कविता अपेक्षाकृत उत्कृष्ठ है। लक्षण और लक्ष्य का समन्वय कवि मे काव्योत्कर्ष को क्षति पहुंचती थी। इसका पक्का प्रमाण भषण की रचना से मिलता है। जिनकी फुटकल रचनाएं उनके लक्षण ग्रंथ शिव–भूषण की कविता से उत्तम है। लक्षणकार लक्षण से तिल भर हट नहीं सकता। वह अगर रत्ती भर भी हट की लक्ष्य बेमेल हुआ।

रीति सिद्ध –जो कवि रीति के बंधन को ढीला करके स्वच्छंद से कुछ पहले की सीमा को अपनाकर रचना किया उन्हें रीति सिद्ध कवि कहा गया। अर्थात जो आदि न तो पूर्ण रूप से रीति के बंधनों से आबद्ध रहे और न ही पूर्ण रूप से स्वच्छंद प्रवृत्ति से एक दम मुक्त बल्कि दोनों के बीच की कड़ी को अपना साध्य बनाया। उसमे बिहारी का स्थान प्रमुख है। डॉ0 विश्वनाथ मिश्र के अनुसार रीतिकाल के कुछ ऐसे भी कवि हैं जिन्होंने रीतिशास्त्र पर कोई ग्रंथ नहीं लिखा। पर वे रीति के ही प्रतिनिधि माने गये है क्योंकि उनपर रीतिशास्त्र की भरपूर छाप है। उनमे मुख्य रूप से

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

बिहारी है।[3] बिहारी एकमात्र ग्रंथ सतसई लिखे। इसके अतिरिक्त उनकी और कोई रचना नहीं। यह सतसई ही उनकी ख्याति का एकमात्र आधार है और इसी के जरिये उन्होंने पूरे रीतिकाल मे अपनी एक अलग छवि बनायी। आचार्य रामचन्द्र शुल्क यही एक ग्रंथ उनकी इतनी बड़ी कीर्ति का आधार है। यह बात साहित्य के क्षेत्र मे इस तथ्य की घोषणा कर रही है कि किसी कवि का यह उसकी रचनाओं के परिणाम के हिसाब से नहीं होता बल्कि गुण के हिसाब से होता है। मुक्तक कविता मे जो गुण होने चाहिए वे

बिहारी के दोहे मे अपने चरम उत्कर्ष पर पहुंचा है। इसमे कोई संदेह नहीं। बिहारी आदि को रीतिबद्ध मानने हेतु या बंधन बांधे रहना भले ही वह ढीला हो। उन्होंने रीति की उपेक्षा कभी नहीं की। बिहारी की सतसैया मे खण्डिता के अनके उदाहरण है जैसे अधिक उदाहरण मे आंखों की ललाई का वर्णन है। लक्षणानुभव करने वालों को संभोग चिन्हों का लम्बा–चौड़ा वर्णन करना पड़ता है। बिहारी उक्ति वैचित्य पर विशेष ध्यान देने वाले थे। अतः उन्होंने खण्डिता के लक्षण मे प्रमुख चिन्हों का तिरस्कार करके केवल ललाई पकड़ी और ऐसी उक्तियां बांध दी–

रहयौ चकित चहुंधा चितै, ंचित मेरो मति भूलि।
सूर उदै आए रही दृगनि सांझ सी फूलि।
संग महावर सौति पग निरखि रही अनरवाय
पिय अगुरनि लाली लखै खरी उठी लगी लाय।[5]

जो कवि रीति से केवल सहारे के लिए काम लेते थे, वे अपनी स्वतंत्र सत्ता भी चाहते थे। रीति की बंधन मे काव्य प्रणयन करने वालो में व्यक्तिगत विशेषता का स्फूरण बहुत कम हो सका। पर जो कवि रीति के आधार पर स्वतंत्र रचना करने को उनमे ऐसी विशेषताऐं साफ दिखाई देती है। बिहारी को दूसरे कवियों से अलग किया जाता है उनका यही कारण है। भले ही उनका रीतिकाल कवियों से मेल नहीं हो। पर शुद्ध रीतिबद्ध कवियों के बीच रखने पर अपनी विशेषता के कारण अलग चमकते रहे।

रीति सिद्ध कवि लक्षण ग्रंथ लिखने वाले कवियों की भांति रीति की शास्त्र के वित्त नियमो का पूरा पालन नहीं करता। शास्त्र स्थिति संसाधन मात्र इनका लक्ष्य नहीं था। कही तो चमत्कारिता के लिए उक्तियां बांधते थे और कहीं रसाभिव्यक्ति के लिए। रीतिशास्त्र मे हुई सामग्री की उपेक्षा करके अपने अनुभव और निरीक्षण से प्राप्त उपलब्धि पर नूतनता का समावेश करते थे।

रीतिमुक्त काव्य धारा – रीतिमुक्त काव्य लिखने के अनेक कारण है जिसमे पहला कारण यही है कि बहुत से कवि संस्कृत की शास्त्रीय परम्परा में बंधकर कविता नहीं करना चाहते है। उनके मन मे अपनी कवि प्रतिभा को बटोरने के विरूद्ध भावना सी थी। ठीक उसी प्रकार की भावना योरप में क्लासिक या शास्त्रीय परम्परा के विरोध मे पनपी और उसके परिणाम स्वरूप योरप का स्वच्छन्दतावादी काव्य प्रकट हुआ। इसी प्रकार की भावना को लेकर अनेक कवि इस युग मे आये जिन्होंने स्वच्छंद रूप से काव्य की रचना की। मुख्यतः ये प्रेम एवं श्रृंगार के कवि है। इन कवियों के मन मे जहॉ एक ओर शास्त्रीय कारण परम्परा के प्रति विद्रोह था वहीं इनके अर्न्तमन मे सामाजिक मर्यादाओं और रूढ़ियों के प्रति विद्रोह की भावना थी।[6] साहित्यक दृष्टि से यह युग सम्पन्नता का युग था। साहित्य केवल बंधी बधायी परंपराओं में न बंधकर बहुमुखी प्रतिभा को प्राप्त कर चुका था। कवियों एवं साहित्यकारों में आबद्धता के प्रति आग्रह न होकर यर्थाथ और सहज की प्रवृति दिखाई पडती थी। रीतियुग जिस परम्परा से ग्रसित थाा कुछ खास लोग उसमें पिसना नहीं चाहते थे। पर अफसोस अनिति पराकाष्ठा को प्राप्त करके ही पतन की ओर अग्रसर होती है। ऐसा वातावरण आ जाता है कि युग बदलने लगता है। उस स्थिति मे कुछ लोग बंधी बधायी रूढियों से बिलकूल अब अलग रहने का साहस जुटा ही लेते है। और अपना अस्तित्व स्वतंत्र रूप से स्थापित कर लेते है। फलस्वरूप प्रत्येक युग मे ऐसे कवि होते है जो किसी परंपरा मे नहीं बंधते बल्कि अपनी छवि अलग बनाये रखते है। सगुण और र्निगुण उपासना की विभिन्न प्रवृत्तियों के काव्य रीति परिपाटी से मुक्त काव्य थे। उन्होंने जो कुछ लिखा अपने अनुभवों से लिखा। स्वच्छंद श्रृंगारी की भांति ये संत कवि भी अपनी आध्यात्यमिक विचारधारा एवं अपनी मान्यताओं मे रूढियों एवं परंपराओं के विरूद्ध थे। इन कवियों ने जो काव्य प्रणीत की वह एक प्रकार से रीतिमुक्त काव्य है। सगुणोंपासक राम, कृष्ण काव्य यद्यपि अपनी वर्णन शैली विषय परिपारी से आबद्ध था फिर भी काव्यशास्त्रीय रीतियों से मुक्त था। स्वछंदता जहॉ उच्छृंखलता के रूप धारण कर लेती है वहॉ पर विलासों मुख होने लगती है। यू तो युग का प्रभाव स्वच्छंद व्यक्तियों पर भी पड़ता है परन्तु जो व्यक्ति युगआत्मा को अपनी ओर आकर्षित करते है वे महान है। चाहे राजा हो या कवि यही कारण है कि सूर और तुलसीदास उस सम्मान को पा सके जिसे सम्राट अकबर भी न पा सके। कुछ व्यक्तियों को इतिहास मे लिखा जाता है और कुछ व्यक्तियों के लिए इतिहास लिखा जाता है। ऐसी आत्माऐं महान होती है।[7] रीतिमुक्त कवि अनुठी भाव भंगिमा वाली उक्तियाँ बांधने वाले थे। पर हृदय से संतृप्त। जूठी उक्ति का पूर्वविधान पिण्टपेषण इन्हें अरूचिकर था। ऐसी स्वच्छतावादी कवि धनानन्द है उनके आत्मिक भावों का

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

प्रकाशन उनके काव्य मे है। जिस प्रकार शरीर मे आत्मा की ज्योति पूंज होना अति आवश्यक है। ठीक उसी प्रकार काव्य मे कवि की अनुभति तत्व एवं भावव्यजंना की रश्मि को विकीर्ण होना भी आवश्यक है। धनानन्द के इस छंद मे रीतिमुक्त कवियों के काव्योत्कर्ष के रूवरूप का अच्छी तरह से पता चल जाता है। नेही महा ब्रजभाषा प्रवीन और सुन्दरतानि के भेद को जानै। वियोग की रीति में कोविद भावना भेद स्वरूप को ठानै। चाहे के रंग में भज्यौ हियौ, बिछुरे मिले प्रीतम संतनि मानै। भाषा प्रवीन सुछन्द सदा रहै, सो धनजी के कवितत् बखानै।

स्वच्छंद शब्द का अर्थ रीति से स्वच्छंद रीतिमुक्त रीतिबद्ध या शास्त्रबद्ध (क्लासिकल प्रवृति के बंधन से छुटकर ही ये रीतिमुक्त या स्वच्छंद रोमांटिक होने वाले कवि थे) इनके विवरण के अनुसार ये प्रेम के अनेक अर्न्तवृत्तियों के उद्घाटन काव्यगत रमणीयता के नाना भेदों के विद्यायक संयोग और वियोग की अनेक दशओ के मार्मिक दृष्टा भावनाओ के सहृदय चितेरे, प्रेमरस से रिक्त भावुक, मिलन और विरह की हृदयगत अशान्ति के अनुभव और भाषा प्रयोग की सीमा के सच्चे ज्ञाता थे। ये वासना से पंकिल मानस का रंजन करने वाले चाटुकार नही थे। ये अपनी उमंग के आदेश पर थिरकने वाले और काव्य विभुति द्वारा काव्यकर्मज्ञो को प्रभावित करने वाले है। ये प्रेम के पथ पर अग्रसर रचना में मोतियों की सी निर्मल वाग्यधारा प्रवाहित करने वाले और उससे काव्य माला गुथने वाले थे। मन मोहिनी और प्रभावुक स्वच्छंद काव्य भावाभिव्यक्ति होता है, बुद्धि बोधित नहीं, इसीलिए आतरिक्ता उसका सर्वोपरि गुण है। आन्तरिक्ता भी रस प्रवृति के कारण स्वच्छंद काव्य की सारा साधन सम्पत्ति शासित रहता है। और यही वह दृष्टि है जिसके द्वारा इन कर्ताओ के रचना के मूल उत्स तक पहुॅचा जा सकता है।

वास्तव मे प्रकृति के सुरम्य रूपो को सुक्ष्म दृष्टि से देखकर उनपर मुग्ध होना एक बात है और नायक नायिकाओ की विहार स्थली को उद्दीपन के रूप मे दिखाना दूसरी बात। एक मे विर्सग काव्यत्व है तो दूसरे मे काव्यात्मा मात्र। उसी भाति उनके नायक–नायिकाओं का विभेद दिखाते हुए हाथों आदि को जोड़कर खड़ा देना मात्र आदि की सदृश्यता है का वैसा पता नहीं लगा सकता जैसा तल्लीनता की अवस्था में प्रेम की मार्मिक उद्गारों और स्त्री–पुरूष मधुर सम्बन्ध के रमणीय प्रसंगो का स्वाभाविक चित्रण करने में। सबसे श्रेष्ठ है उनके विषय में डॉ0 श्याम सुन्दर ने लिखा है– रीति भी ..... के बाहर प्रेम सम्बन्धी सुन्दर मुक्तक छंदों की रचना करने वालों में जिन तीन कवियों का प्रमुख स्थान है वे है– धनांनद ठाकुर, बोधा। रीति के भीतर रहकर बधे बधाएं बिभाव अनुभव, संचारीभाव के संयोग से और परंपरा प्रचलित उपमानो से काव्य ढ़ाचा खड़ा करना कवि को विशेष उँचा नहीं उठाता हैं।

स्वच्छंद कवि हृदय की दौड़ के लिए राजमार्ग चाहते थे, रीति की संकरी गली में धक्कम धक्का करना नही। ये कवित की नापी–तुली नाली खोदने वाले न थे। ये कविता का उत्स प्रवाहित करने वाले या मानस रस का उन्मुक्त दान देने वाले थे।

क्योंकि जहॉ प्रेम भावना मांसल, सौंदर्य से आतंरिक सौंदर्य की ओर होती है वहाँ प्रेम विशुद्ध तथा उच्च कोटि भी दुर्गध से दूर होता है। वहॉ वह मानस प्रेम का रूप ले लेता है।

इस प्रकार रीतिमुक्त का सीधा और सरल अर्थ है रीतिबध परम्परा मे साहित्यक बंधनो और रूढ़ियों से मुक्त। यह शब्द स्पष्टतः इस धारा की दूसरी समसामयिक काव्य प्रवृति से तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। यो तो रीतिमुक्तता की प्रवृति की साहित्य की सभी कालों में किसी न किसी रूप में विद्यमान है परन्तु रीतिकालीन श्रृंगारी कवियो के लिए यह शब्द रूढ़ हो गया था। यो तो ढूंढने वाले सूर एवं तुलसी में भी प्रगतिवाद एवं स्वचछंदता वाद ढूढ़ निकालते है। जबकि उस समय यह नाम भी नही था।

ये रीति मुक्त श्रृगारी कवि काव्यशास्त्रीय परम्परा से भलिभांति परिचित थे और इसी रीति के विरोध में काव्य रचना करना अवधारणा थी। इसलिए ही रीतिमुक्त कवियों ने काव्यशास्त्रीय परंपरा का उल्लंघन किया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास पे0 195। आचार्य राम चन्द्र शुक्ल
2. हिन्दी साहित्य का बृहद इतिहस। डा0 नगेन्द्र। पे0 1399
3.. हिन्दी साहित्य का अतीत। डा0 विश्वनाथ मिश्र। पे0 379
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास। राम चन्द्र शुक्ल। पे0 171
5. हिन्दी साहित्य का अतीत। डा0 विश्वनाथ। पे0 384
6. हिन्दी साहित्य का बृहद इतिहस। डा0 भगीरथ मिश्र।
7. धनान्द का काव्य दर्शन। डा0 सत्यदेव वर्मा पे0 147
8. हिन्दी साहित्य का अतीत। डा0 विश्वनाथ मिश्र। पे0 385
9. वही पे0 सं0 285

*****